**ओ३म्**

**‘माता के दूध का ऋण, सत्य धर्म की खोज व उसका पालन’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

****अपार ब्रह्माण्ड का एक छोटा सा ग्रह यह पृथिवी लोक सर्वत्र मुनष्यों एवं अन्य प्राणियों से भरा हुआ है। मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जिसे परमात्मा ने बुद्धि तत्व दिया है जो ज्ञान का वाहक है। ईश्वर निष्पक्ष एवं सबका हितैषी है। इसी कारण उसने हिन्दू, मुसलमान व ईसाई आदि मतों के लोगों में किंचित भी भेद नहीं किया। सबका एक जैसा शरीर बनाया व उन्हें एक समान इन्द्रियां व शक्तियां प्रदान की हैं। ईश्वर के देश-देशान्तरों के कार्यों में भी सर्वत्र एकरूपता है। देश काल परिस्थितियों के अनुसार कहीं भेद उसके द्वारा नहीं किया गया है। सभी मनुष्यों का जन्म माता के गर्भ में हिन्दी मास के अनुसार 10 माह व्यतीत करने के बाद होता है। इन 10 महीनों में माता को अपनी भी देखभाल करनी होती है और साथ में अपनी भावी सन्तान की भी जो उसके गर्भ में पल रही होती है। सन्तान के प्रति वह इतनी सावधान होती है कि उसे अपने किसी हित व सुख की चिन्ता नहीं होती और सन्तान के लाभ के लिए वह अपनी सभी इच्छाओं व आकांक्षाओं के लिए समर्पित रहती है। प्रसव पीड़ा में असह्य वेदना माताओं को होती है। कुछ माताओं का तो प्रसव के समय देहान्त भी हो जाता है। पहले यह घटनायें अधिक होती थी परन्तु चिकित्सा विज्ञान की उन्नति से यह दर अब घट गई है। अतः माता का सन्तान को उत्पन्न करने और उसका पालन पोषण करने में सर्वाधिक योगदान होता है। सम्भवतः इसी कारण माता को ईश्वर के बाद दूसरे स्थान पर रखकर सर्वाधिक पूजा व सत्कार के योग्य माना जाता है। **यह है भी ठीक, परन्तु क्या सभी सन्तानें माता व पिता की भावनाओं का ध्यान रखते हैं?**

**मनमोहन कुमार आर्य**

यदि माता की सन्तान के प्रति भावना का मनोवैज्ञानिक अध्ययन करें तो यह पाया जाता है कि माता अपनी सन्तान को सबसे अधिक योग्य देखना चाहती है। कोई माता नहीं चाहती कि उसकी सन्तान झूठ बोले और झूठी कहलाये। वह चोरी करे, पकड़ी जाये और चोर कहलाये। कोई माता नहीं चाहती कि उसकी सन्तान निर्बल हो। कोई भी माता यह नहीं चाहती कि उसकी सन्तान अज्ञानी या अल्पज्ञानी हो अपितु सभी मातायें चाहती हैं कि उसकी सन्तान अधिक से अधिक पढ़ी-लिखी, ज्ञानी व योग्य हों और उसका देश व समाज में सम्मानित स्थान हो। **यदि ऐसा है, यह सभी स्वीकार करते हैं, तो फिर सन्तानों का कर्तव्य क्या है?** क्या उन्हें सत्य नहीं बोलना चाहिये, क्या उन्हें चोरी व छिपा कर कोई काम करना चाहिये जो गलत हो, क्या उन्हें सत्य ज्ञान की प्राप्ति में प्रमाद करना चाहिये, क्या उन्हें मांसाहार व मदिरापान जैसे व्यसनों का दास बनना चाहिये या इससे मुक्त होकर अच्छा शाकाहारी भोजन कर व व्यायाम व संयमपूर्ण जीवन व्यतीत कर स्वयं को स्वस्थ रखना व दीघार्यु बनाना चाहिये? हम समझते हैं कि इन प्रश्नों के उत्तर सभी को पता हैं और वह कहेंगे कि उन्हें सत्य ही बोलना चाहिये, छिपा कर कोई कार्य जैसे चोरी आदि नहीं करनी चाहिये, सत्य ज्ञान की प्राप्ति में प्रमाद नहीं करना चाहिये, असत्य का त्याग व सत्य का ग्रहण करने में तत्पर रहना चाहिये, अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि करनी चाहिये। मांसाहार व मदिरापान व हानिकारक तला, नमकीन, कड़वा व अधिक मीठा भोजन जो रोगकारक होता है, उसका सेवन नहीं करना चाहिये। पूर्ण संयम से युक्त जीवन व्यतीत करना चाहिये आदि। **अब प्रश्न यह है कि क्या देश व संसार के लोग ऐसा करते हैं वा कर रहें हैं तो इसका उत्तर ‘न’ में मिलता है।** इसका अर्थ हुआ कि संसार के लोग अपनी जन्मदात्री माता की भावनाओं का आदर नहीं करते और उनका आचरण प्रायः अपनी-अपनी माताओं की भावनाओं के विरूद्ध होता है। **हम समझते हैं कि माता की सन्तान के प्रति जो भावनायें होती हैं वह ईश्वर प्रदत्त हैं। ईश्वर भी सभी मनुष्यों से वही चाहता है कि जो एक योग्य माता अपनी सन्तानों से चाहती है।**

ऐसी स्थिति में मनुष्यों का कर्तव्य क्या है व उन्हें क्या करना चाहिये? इसका उत्तर है कि मनुष्यों को सत्य ज्ञान व सत्य व्यवहार की खोज कर सत्य को अपनाना चाहिये और अपने व दूसरे के असत्य को छोड़़ना व छुड़वाना चाहिये। सत्य ज्ञान की खोज में कुछ बातें महत्वपूर्ण हैं जिन्हें सभी मनुष्यों को जानना चाहिये। इसके लिए उन्हें इस संसार को बनाने वाली व चलाने वाली सत्ता का सत्य स्वरूप कैसा है? उसने यह संसार क्यों, किसके लिये, किन साधनों से बनाया? मनुष्यों व प्राणियों में क्या कोई आत्मा नाम का तत्व या सत्ता विद्यमान है या नहीं? यदि है तो वह कब अस्तित्व में आया या हमेशा से है, उसका जन्म किस प्रकार व क्यों होता है, मनुष्य जीवन का उद्देश्य क्या है और पशुओं के जीवन का कारण क्या है? मनुष्यों के जीवन के मुख्य उद्देश्य की पूर्ति के साधन क्या हैं? मनुष्यों को ईश्वर की स्तुति प्रार्थना व उपासना करनी चाहिये या नहीं व करनी चाहिए तो क्यों करनी चाहिए? यदि करनी चाहिये तो उसकी सबसे उपयुक्त विधि क्या है जिससे स्तुति, प्रार्थना व उपासना का परिणाम शीघ्र प्राप्त हो सके। क्या संसार के सभी मत-मतान्तर पूरी तरह से सत्य हैं या उनमें सत्य व असत्य दोनों मिश्रित है? क्या मनुष्यों के अलग अलग धर्म व मत उचित हैं व नहीं? आदि ऐसे अनेकों प्रश्न है जिन पर मनुष्यों को विचार कर उनके सत्य उत्तर खोजनें चाहियें। इनके सत्य उत्तर उन्हें कहां से प्राप्त हो सकते हैं, यह मुख्य प्रश्न है जिसका उत्तर आगामी पंक्तियों में देने का प्रयास करते हैं।

जिन प्रश्नों को हमने प्रस्तुत किया है उसके उत्तर आधुनिक विज्ञान के पास भी नहीं। संसार में जितने भी मत-मतान्तर हैं वहां तो इनके सही उत्तर मिलने की आशा करना ही हमारी भूल हो सकती है। यदि ऐसा है तो फिर इनके उत्तर कहां है? इसका उत्तर है कि इन सभी प्रश्नों के सही उत्तर वेद और वैदिक साहित्य में हैं व महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों सत्यार्थ प्रकाश आदि में हैं। इसकी पृष्ठ भूमि यह है कि महर्षि दयानन्द को 14 वर्ष की आयु में यह जिज्ञासा हुई कि इस संसार को बनाने वाला व चलाने वाला ईश्वर शिवलिंग व इस जैसी अन्य मूर्तियां नहीं हो सकती जिसकी पौराणिक लोग पूजा-उपासना करते हैं। इसका कारण था कि जो पाषाण व धातु की मूर्ति या मूर्तियां अपने ऊपर से मूषक-चूहों को ही न हटा व भगा सकें, वह कभी भी ईश्वर नहीं हो सकतीं। उन्होंने अनेक लोगों से इस बारे में प्रश्न किया परन्तु कहीं से केाई उत्तर नहीं मिला। अन्ततः उन्होंने 21 वर्ष की अवस्था में गृह त्याग कर देश भर में जा-जा कर ज्ञानियों, विद्वानों, योगियों, तपस्वियों को ढूंब् कर उनकी संगति की व देश के पुस्तकालयों की पुस्तकों का अध्ययन किया। इस पर भी उनकी जिज्ञासाओं का उन्हें सन्तोषप्रद उत्तर नहीं मिला। इस बीच योग साधना करते-करते वह स्वयं सिद्ध योगी भी बन गये। तदन्तर पता चलने पर वह मथुरा के प्रज्ञाचक्षु दण्डी गुरू स्वामी विरजानन्द सरस्वती के पास पहुंचे और उनसे लगभग ढाई वर्षों तक वैदिक व्याकरण का अध्ययन किया व गुरू की संगति से अनेक रहस्यों को जानकर अपनी समस्त शंकाओं का निवारण किया। वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि विश्व साहित्य में चार वेद मंत्र-संहितायें ही ईश्वर ज्ञान की पुस्तकें हैं। इन पुस्तकों में निहित ज्ञान को सृष्टि के आरम्भ में सर्वव्यापक व सर्वान्तर्यामी ईश्वर ने चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा की आत्माओं के भीतर प्रेरणा करके उन्हें प्रदान किया था।

महर्षि दयानन्द वेद की गहराई में उतरे और उन्हें सभी वेदमन्त्रों के सत्य अर्थ व सांसारिक तथा आध्यात्मिक सभी बातों का ज्ञान सहित सभी गम्भीर रहस्यों का ज्ञान हुआ। ज्ञान-विज्ञान की अपूर्व योग्यता प्राप्त कर उन्होंने साधारण मनुष्यों से लेकर वैज्ञानिकों के मन व मस्तिष्क में उठने वाले सभी प्रश्नों के वेद, शास्त्र, तर्क, युक्ति व प्रमाणों से युक्त सभी प्रश्नों के समाधान किये। उनके द्वारा किये गए समाधानों से उनके समय का सारा समाज व विश्व अनभिज्ञ था। इसके लिए उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश आदि अनेक ग्रन्थों का प्रणयन भी किया। इस प्रकार से मानव मस्तिष्क में उठने वाले समस्त सांसारिक एवं आध्यात्मिक प्रश्नों का उन्होंने समाधान कर विश्व इतिहास में अपूर्व कार्य किया। उनके द्वारा रचित ग्रन्थों के अध्ययन किए बिना मनुष्य संसार सम्बन्धी सत्य ज्ञान व आध्यात्मिक रहस्यों को नहीं जान सकता। अतः सत्य ज्ञान के लिए महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों तथा वेद और वैदिक साहित्य का अध्ययन आवश्यक है। ऐसा करके ही हम अपने-अपने मानव जीवन को सफल कर सकते हैं और हमारे माता-पिता तथा आचार्यों, मुख्यतः जन्मदात्री माता, की हमसे जो अपेक्षायें रहीं हैं वह स्वामी दयानन्द द्वारा खोजी गई सांसारिक व आध्यात्मिक सच्चईयों को जानकर व उसका आचरण करके ही पूरी होती हैं। हम ऐसा करके सत्य व धर्म को जानकर व धारण करके श्रेष्ठ मनुष्य बन कर जीवन के लक्ष्य मोक्ष की ओर बढ़ सकते हैं। **महर्षि दयानन्द संसार की प्रत्येक जन्मदात्री माता के स्वप्नों के साक्षात साकार रूप थे जिसका उल्लेख हमने आरम्भ में किया है।** उनके बाद स्वामी श्रद्धानन्द, पण्डित गुरूदत्त विद्यार्थी, पं. लेखराम, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, स्वामी वेदानन्द सरस्वती, स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, डा. रामनाथ वेदालंकार, पं. गंगा प्रसाद उपाधाय, स्वामी सर्वदानन्द सरस्वती डा. सत्यप्रकाश सरस्वती आदि अनेक नाम हैं जिन्होंने इस पथ का अनुसरण कर अपने जीवन को कृतार्थ किया। आईये, ईश्वर, महर्षि दयानन्द, आर्यसमाज द्वारा प्रदत्त वैदिक साहित्य की शरण ले कर अपने जीवनों को सफल बनायें।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**